पूर्वी समस्या बाल्कन युद्ध (1912–13)

डॉ. के.के. पटेल
विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोप के इतिहास में पूर्वी समस्या को अत्यन्त जटिल समस्या के आप में जाना जाता है। इस समस्या ने समय–समय पर यूरोपीय राजनीति के विभिन्न अंगों को प्रभावित किया था। शायद ही ऐसा कोई वर्ष रहा हो, जब इस समस्या ने यूरोप महाद्वीप की राजनीति पर अपना प्रभाव न छोड़ा हो। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में विभिन्न देशों के निहित स्वार्थी ने पूर्वी समस्या के स्वरूप को आर अधिक जटिल बना दिया था। सन् 1908 की युवा तुर्क क्रान्ति (Young Turk Revolution) निःसन्देह पूर्वी समस्या के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटना थी, किन्तु उससे भी अधिक महत्वपूर्ण घटना प्रथम तथा द्वितीय बाल्कन युद्ध के रूप में घटित हुई थी। इस घटना का प्रथम विश्वयुद्ध जैसी विनाशकारी घटना के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध था।

बाल्कन संघ और वाल्कन युद्धों की पृष्ठभूमि

प्रथम विश्वयुद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व पूर्वी समस्या के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने वाले प्रथम तथा द्वितीय बाल्कन युद्ध किसी आकस्मिक घटना के परिणाम नहों थे, बल्कि उनकी पृष्ठभूमि सन् 1878 की बर्लिन सन्धि के समय ही तैयार हो गयी थी। बलिन सन्धि में बाल्कन प्रायद्वीप के दो राज्यों —बोस्निया और हर्जगोविना के प्रशासन का अधिकार आस्ट्रिया को प्रदान कर दिया गया था। किन्तु यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया था कि आस्ट्रिया इन दोनों राज्यों को अपने साम्राज्य में विलीन नहीं करेगा। बर्लिन सन्धि में लिये गये इस निर्णय ने आस्ट्रिया की महत्वाकांक्षाओं में वृद्धि करने में पूरा सहयोग किया था। बोस्निया व हर्जोगोविना प्रान्तों की अधिकांश जनता सर्व जाति से सम्बन्धित थी, इसलिए सबिया राज्य इन दोनों प्रदेशों पर अपना अधिकार करना चाहता था।

सन् 1878 की बर्लिन सन्धि के सम्पन्न होने के बाद से आस्ट्रिया उपर्युक्त दोनों प्रदेशों—बोस्निया तथा हर्जीगोविना को अपने साम्राज्य में मिलाने की योजना बनाने लगा था, किन्तु उसे रूस के विरोध का भय लगा रहता था। यद्यपि सन् 1904–05 के युद्ध में जापान के हाथों पराजित होने के पश्चात् रूस का पूरा ध्यान अपनी आन्तरिक समस्याओं का समाधान करने में लगा हुआ था, तथापि आस्ट्रिया की उपर्युक्त योजना का विरोध करना रूस के लिए स्वाभाविक और अनिवार्य था। सन् 1908 में आस्ट्रिया की कूटनीति सफल हो गयी। उसने इन दोनों बाल्कन राज्यों का

अपने साम्राज्य में मिलाने का प्रयास किया। आस्ट्रिया का यह कार्य राष्ट्रीयता के सिद्धान्त के विरुद्ध था, जिसके फलस्वरूप बाल्कन प्रायद्वीप की शान्ति भंग हो गयी। सबिया राज्य के समाचार पत्रों में के इस गलत कार्य का तीव्र विरोध किया गया। रूस की सरकार ने भी विरोधी कदम उठाने का प्रयास किया, किन्तु जर्मनी द्वारा हस्तक्षेप किये जाने के परिणामस्वरूप स्थिति शान्त हो गयाँ और बोस्निया एवं हजोगोविना दोनों प्रदेशों पर आस्ट्रिया का अधिकार स्वीकार कर लिया गया।

ऑस्ट्रिया का उपर्युक्त कार्य बाल्कन राज्यों के लिए एक ऐसा घाव था जिसे प्रथम विश्वयुद्ध की घटनाओं द्वारा भरने का प्रयास किया गया था। एक तरफ बोस्निया काण्ड में आस्ट्रिया की कूटनीतिक विजय हुई थी, वहीं दूसरी तरफ आस्ट्रिया के इस कार्य के विरुद्ध बाल्कन राज्यों में संगठन, राष्ट्रीयता और एकता की भावना का प्रादुर्भाव हुआ था। ऑस्ट्रिया के इस निर्णय से आक्रोशित होकर सभी बाल्कन राज्यों ने बोस्निया हजोगोविना राज्यों के जनता को आस्ट्रिया के चंगुल से मुक्त कराने का दृढ संकल्प लिया था। यद्यपि इस घटना से पूर्व इन राज्यों को जनता में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न हो चुकी थी, तथापि समान शत्रु के विरोध में शक्तिशाली मोर्चा लेने के लिए एकता व संगठन की भावना का अभाव था। अतः बोस्निया काण्ड के फलस्वरूप बाल्कन राज्यों में संगठन व एकता की भावना का संचार हुआ जिसके फलस्वरूप एक संगठन की आवश्यकता का अनुभव किया गया। बाल्कन संघ का गठन भी इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया गया था।

बाल्कन संघ का गठन

बोस्निया हर्जीगोविना की समस्या ने बाल्कन राज्यों की जनता के असन्तोष को बिन्दु पर पहुंचा दिया था। इन राज्यों की जनता ने आस्ट्रिया से बदला लेने के लिए संगठित होना आवश्यक समझा। सौभाग्य से बाल्कन राज्यों को रूस जैसे विशाल देश की सहानुभूति प्राप्त हो गयी। रूस भी आस्ट्रिया से बर्लिन संधि (1878) का बदला लेना चाहता था। अतः रूस ने बाल्कन प्रायद्वीप की जनता को टर्की और आस्ट्रिया के बन्धन से मुक्त होने के लिए दोनों शत्रुओं के विरुद्ध एक शक्तिशाली संगठन तैयार करने के लिए प्रेरित किया, ताकि उस संगठन के माध्यम से अपने लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

उपर्युक्त उद्देश्य को लेकर माल्कन प्रायद्वीप के तीन राज्यों– सबिया, बलगेरिया यूनान के मध्य दो अलग–अलग सन्धिय सम्पन्न हुई थी। पहली सन्धि सबिया तथा बलगेरिया के मध्य आस्ट्रिया के विरुद्ध तथा दूसरी सन्धि बलगेरिया एवं यूनान के मध्य के विरुद्ध सम्पन्न हुई थी। इन दोनों सन्धियों को मिलाकर सन् 1912 में बाल्कन संघ (Balkan League) के नाम से एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली संगठन की स्थापना की गयी थी। इस संगठन में मॉण्टीनीग्रो राज्य को भी सम्मिलित किया गया

था। इसी बाल्कन संघ को आधार बनाकर प्रथम तथा द्वितीय बाल्कन युद्ध लड़े गये थे।

प्रथम बाल्कन युद्ध के कारण

बाल्कन लीग की स्थापना के बाद बाल्कन राज्यों ने अपने आपको पर्याप्त सुरक्षित अनुभव किया और मॉण्टोनीग्रो, सर्बिया, बलगेरिया व यूनान ने 1912 ई में तुर्की के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी, जिसके लिए निम्नलिखित कारणों को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है–

1. तुर्की विभिन्न जातियों, भाषाओ, धर्मो और संस्कृतियों का संग्रहालय था। तुर्क निसन्देह शासक थे किन्तु संख्या में अत्यन्त न्यून थे। उनके द्वारा शासित गैर–तुकों की संख्या तुर्की में बहुत अधिक थी और उनमें राष्ट्रीयता की भावना का अत्यधिक विकास हो चुका था इसलिए अम तुर्की साम्राज्य की प्रभुता को उतार फेंकना अपनी स्वतंत्रता की स्थापना करना चाहते थे।

2. युवा तुर्क क्रान्ति गैर–तुर्क विरोधी सिद्ध हुई। तुर्की ने दूसरी समस्त गैर–तुर्क जातियों के प्रति असहिष्णुता की नीति को अपनाया और उनके तुर्कीकरण का प्रयास किया। इससे अन्य जातियों में भी जातिवाद की भावना का उदय हुआ। इन जातियों की राष्ट्रीयता तुर्क–विरोधी थी। इसलिए गैर–तुर्क विरोधी राष्ट्रीयता तथा तुर्क–विरोधी राष्ट्रीयता के संघर्ष ने बाल्कन युद्ध को जन्म दिया।

3. युवा तुर्क आन्दोलन के दौरान गैर–तुर्कों को अत्यधिक हानि उठानी पड़ी। हजारों आमोनिया निवासियों को कत्ल कर दिया गया। मैसीडोनिया तथा क्रोट के यूनानियों का भी क्रूरता से दमन किया गया। अल्बानिया के मुसलमानों के साथ भी अत्यन्त क्रूरता का व्यवहार किया गया। युवा तुर्की ने उनकी स्वतन्त्रता का भी अपहरण करना चाहा। गैर तुर्क युवा तुर्कों की बदले की भावना और उत्पीड़न से अत्यधिक नाराज थे। इस जातिगत विरोधी भावनाओं ने बाल्कन युद्ध को अनिवार्य बना दिया था।

4. तुर्की साम्राज्य में सहधार्मिकता और सहजातीयता की भावनाओं ने भी विचित्र स्थिति उत्पन्न कर दी थी। विभिन्न प्रदेशों में निवास करने वाले मनुष्य समान धर्म और जाति के आधार पर एक राज्य में संगठित होना चाहते थे। उदाहरण के लिए, सबिया, मॉण्टीनीग्रो, बोसनिया व हर्जीगोविना की जनता एक ही मूल की थी अतः वे एक ही राज्य के अन्तर्गत संगठित होना चाहती थी। इसी प्रकार यूनान क्रीट, मैसीडोनिया आदि द्वीपों पर अधिकार करना चाहता था, क्योंकि इन प्रदेशों में अधिकांशतः यूनानी लोग निवास करते थे। इन सहजातीयता व सहधार्मिकता पर आधारित आन्दोलनों ने बाल्कन प्रदेश में अत्यधिक अनिश्चितता उत्पन्न कर दी थी।

5. तुर्की साम्राज्य में विदेशों के हित निहित थे। कभी–कभी वे परस्पर विरोधी भी हो जाते थे। सहधार्मिकता और सहजातीयता के सिद्धान्त पर रूस और सर्बिया

एक–दूसरे के मित्र थे। इसी प्रकार तुर्की की समस्या के प्रश्न पर जर्मनी और आस्ट्रिया एक–दूसरे के समर्थक थे । इटली आस्ट्रिया के दक्षिण की ओर विस्तार का विरोधी था और इंग्लैण्ड तुर्की को रूस के प्रभाव से पूरी तरह मुक्त करना चाहता था। इस प्रकार तुर्की साम्राज्य के अन्तर्गत कोई भी छोटी घटना विदेशी हितों के कारण जटिल रूप धारण कर लेती थी।

6. तुर्की के गैर–तुर्क राज्य एक–दूसरे के शत्रु थे। उदाहरण के लिए, बलगेरिया, सबिया और यूनान की एक–दूसरे से शताब्दियों पुरानी शत्रुता थी। द्वितीय बाल्कन युद्ध के विस्फोट में इन गैर–तुर्क राज्यों की परस्पर प्रतिद्वन्द्विता बहुत सीमा तक उत्तरदायी थी।

7. जो कुछ थोड़ी बहुत स्वतन्त्रता टर्की के विरुद्ध बाल्कन राज्यों ने अर्जित की थी, उसने टर्की साम्राज्य की दुर्बलताओं को उजागर कर दिया था और अन्य अधीनस्थ राज्यों को प्रेरित किया था कि वे भी विद्रोह करके अपनी स्वतन्त्रता के लिए प्रयास करें।

प्रथम बाल्कन युद्ध की घटनाएँ

पूर्वी समस्या ने 1912 ई. में उस समय उप रूप धारण कर लिया जब मॉण्टीनीग्रो, सर्बिया, बलगेरिया और यूनान ने तुर्की साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। तीन सप्ताह के अन्तर से यूनान ने मैसीडोनिया पर अपना प्रभुत्व स्थापित करके सोलेनिका के बन्दरगाह पर अधिकार कर लिया। दूसरी ओर सर्बो ने तुर्कों को कुमानोवा में बुरी तरह हराया और इसी प्रकार बलगेरिया ने किर्फ किलासो और लूली बर्गस के युद्धों में टर्की के विरुद्ध सफलता अर्जित की। शीघ्र ही बलगेरिया को विजयी सेनाएँ तुर्की की राजधानी कुस्तुन्तुनिया तक जा पहुँची। इस प्रकार तुर्की के हाथ से कुस्तुन्तुनिया, एड्रियानोपल और जैनिना के अतिरिक्त समस्त यूरोपीय साम्राज्य निकल गया। बाल्कन राज्यों को इस सफलता पर टिप्पणी करते हुए गुशफ ने लिखा है, 'एक आश्चर्यजनक घटना घटित हुई– एम महिने के अन्दर बाल्कन लीग ने ऑटोमन साम्राज्य को नष्ट कर दिया। चार छोटे राज्यों ने 10,000,000 जनसंख्या के साथ 25,000,000 जनसंख्या वाले विशाल देश को पराजित कर दिया।

निरन्तर युद्धों से उब जाने के कारण तुर्की सन्धि की कामना करने लगा था किन्तु 1912 ई. के लन्दन के सम्मेलन में यह सम्भव नहीं हो सका। इस सम्मेलन की असफलता का मुख्य कारण यह था कि बलगेरिया एड्रियानोपल को प्राप्त करने हेतु दृढ़–प्रतिज्ञ था जबकि तुर्कों इसके लिए तैयार नहीं था।

1913 ई. में युद्ध पुनः प्रारम्भ हो गया और शीघ्र ही जैनिना पर तुर्कों ने अपने आधिपत्य को खो दिया। 26 मार्च, 1913 ई. को एड्रियानोपल पर बाल्कन लोग के

सदस्यों का अधिकार स्थापित हो गया और 23 अप्रैल को उन्होंने स्कूतरी पर भी अपना प्रभाव जमा लिया। अतः बाध्य होकर तुर्की को पुनः सन्धि के लिए प्रार्थना करनी पड़ी। परिणामतः 30 मई, 1913 ई को तुर्की एवं बाल्कन राज्यों के मध्य लन्दन की सन्धि हुई।

लन्दन की सन्धि – सन्दन की सन्धि की निम्नलिखित प्रमुख धाराएँ थीं–

1. ईजियन सागर पर स्थित एनोज में काले सागर पर स्थित मीडिआ तक एक रेखा खींची गयी। इस रेखा के पश्चिम का प्रायः सम्पूर्ण तुर्की प्रदेश मित्र राष्ट्रों को दे दिया गया।

2. महाशक्तियाँ अल्बानिया के भविष्य और सीमाओं के निर्धारण हेतु सहमत हो गयीं।

3. यूनान को क्रीट का प्रदेश प्रदान किया गया।

4. यूनान ने ईजियन सागर के कुछ प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था, उनके भविष्य के प्रश्न को निर्धारित करने का अधिकार भी महाशक्तियों को सौंपा गया।

इस प्रकार लन्दन की सन्धि ने तुर्की साम्राज्य का विभाजन कर दिया। प्रसिद्ध इतिहासकार हेजन ने इस सन्दर्भ में लिखा है, "यूरोप में तुर्की के सुल्तान का प्रभाव समाप्ति के अन्तिम बिन्दु तक पहुँच गया था। पाँच शताब्दियों के गौरवपूर्ण अधिकार के बाद तुर्की को यूरोप से लगभग बहिष्कृत कर दिया गया था। अब उसके पास केवल कुस्तुन्तुनिया और उसे सुरक्षित बनाये रखने के लिए उसके आसपास के कुछ प्रदेश ही रह गये थे।"

लन्दन की सन्धि की आलोचना करते हुए मैरियट ने भी लिखा है, "यूरोप की महाशक्तियों ने इस महत्वपूर्ण उपलब्धि के लिए अपने आपको बधाई दी कि उन्होंने उस समस्या को हल कर लिया है जिससे सम्पूर्ण यूरोप ग्रसित था; वे बादल अब छट गये हैं; जो यूरोप की शान्ति को भंग कर सकते थे; ऑटोमन साम्राज्य का लम्बे समय से प्रतीक्षित अन्त जो लम्बे समय से भयभीत कर रहा था, अत्यन्त ठीक प्रकार से हो गया : नवीन राष्ट्रों का जन्म हुआ था और इससे पूर्व कभी भी पुराने राष्ट्रों ने अपने मित्रता और सहयोग की भावना से इतना आबद्व नहीं किया था।

दोनों बाल्कन युद्धों के परिणाम

1. तुर्की साम्राज्य को प्रथम बाल्कन युद्ध में अत्यधिक हानि उठानी पड़ी और उसका अस्तित्व एक छोटे अधीनस्थ राज्य के रूप में परिवर्तित हो गया, किन्तु द्वितीय बाल्कन युद्ध के परिणामस्वरूप उसकी स्थिति में कुछ सुधार हुआ। एड्रियानोपल तथा कुछ अन्य महत्वपूर्ण प्रदेशों की बुखारेस्ट की सन्धि में प्राप्ति के बाद उसके सम्मान और शक्ति में वृद्धि हुई।

2. बुखारेस्ट की सन्धि से यूनान को सर्वाधिक लाभ हुआ, फिर भी वह अपनी इन उपलब्धियों से सन्तुष्ट नहीं था और अल्बानिया के दक्षिणी प्रदेशों को प्राप्त करने का इच्छुक था।

3. सर्बिया को भी बाल्कन युद्धों से लाभ प्राप्त हुआ। साम्राज्य की सीमाओं और जनसंख्या की दृष्टि से उसका अस्तित्व पहले से दुगुना हो गया था।

4. रूमानिया की सीमाओं में भी काफी वृद्धि हो गयी थी, किन्तु फिर भी वह सन्तुष्ट नहीं था, वह कुछ और प्रदेशों को प्राप्त करने का इच्छुक था जो उसे प्रदान नहीं किये गये।

5. प्रथम बाल्कन युद्ध के बाद होने वाली लन्दन की सन्धि के अन्तर्गत बलगेरिया की स्थिति अत्यन्त सम्माननीय हो गयी थी। वृहत्तर बलगेरिया के गठन के बाद बलगेरिया बाल्कन राज्यों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गया था किन्तु बुखारेस्ट की सन्धि उसके लिए अत्यन्त घातक सिद्ध हुई। उसका समस्त सम्मान एवं शक्ति इस सन्धि की भेंट चढ़ गयी। द्वितीय बाल्कन युद्ध में उसे सबसे अधिक हानि का सामना करना पड़ा।

6. आस्ट्रिया, सबिया, इटली और यूनान की इच्छाओं के विरुद्ध महाशक्तियों ने अल्बानिया को स्वायत्तता का अधिकार दे दिया था। ये देश अल्बानिया का आपस में बँटवारा करना चाहते थे।

7. मॉण्टीनीग्रो को नोबी बाजार का क्षेत्र दिया गया किन्तु उसे स्कूतरी प्राप्त नहीं हो सका जिसके लिए वह बहुत अधिक आकांक्षित था।

8. बुखारेस्ट की सन्धि से कोई भी बाल्कन राज्य सन्तुष्ट नहीं था। यद्यपि इसी सन्धि ने द्वितीय बाल्कन युद्ध को समाप्त कर दिया था किन्तु बाल्कन राज्यों के असन्तोष में बहुत अधिक वृद्धि कर दी थी।

9. बाल्कन युद्ध के कारण जन–धन व सम्पत्ति की भारी हानि हुई और असंख्य लोग इस युद्ध की समाप्ति के बाद भूख और अकाल का शिकार बने।

निष्कर्ष

बाल्कन युद्ध यूरोप के लिए ज्वालामुखी सिद्ध हुए। यूरोप के देशों की महत्वाकांक्षाएँ बाल्कन प्रायद्वीप में एक–दूसरे से परस्पर टकरायी तथा उनके परस्पर झगड़ों और ईर्ष्याओं ने कालान्तर में प्रथम महायुद्ध के विस्फोट को अनिवार्य बना दिया। प्रसिद्ध इतिहासकार हेजन ने लिखा है, "1912–13 ई. के बाल्कन युद्ध 1914 ई. के महायुद्ध की भूमिका थे। 1908 ई. की युवा तुर्क क्रान्ति से लेकर 1914 ई. में आस्ट्रिया सर्बिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा तक घटनाओं का क्रम अत्यन्त विनाशक है। प्रत्येक वर्ष में यह लोहे की जंजीर उत्तरोत्तर लम्बी होती गयी।

इसी प्रकार गाण्ट व टेम्परले ने भी लिखा है कि "सन् 1914 के महायुद्ध के लिए कोई भी घटना इतनी अधिक उत्तरदायी नहीं है जितना कि बाल्कन युद्ध। इस युद्ध ने तुर्कों का पतन करके शक्ति सन्तुलन को प्रभावित किया। सबिया ने अपनी जनसंख्या में वृद्धि की तथा बोसनिया के अपमान का बदला ले लिया। सबिया के राष्ट्रीय आन्दोलन के परिणामस्वरूप कालान्तर में यूगोस्लाविया का जन्म हुआ। यूनान वृहत्तर यूनान, रूमानिया वृहत्तर रूमानिया और सर्बिया वृहत्तर सर्बिया की स्थापना का स्वप्न देखने लगे तथा आसपास के देशों में निवास करने वाली सर्व व रुमानियन जातियाँ अपने उद्धार के लिए इन देशों की ओर निहारने लगीं। आस्ट्रिया हंगरी और तुर्की में निरन्तर होने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन भी बाल्कन युद्ध के प्रत्यक्ष प्रमाण थे।"

हिटलर (नाजी दल) के उदय के कारण

विलियम कैसर द्वितीय के पदत्याग के बाद जर्मनी में गणतन्त्रात्मक सरकार की स्थापना की गयी। इस सरकार के सम्मुख अनेकानेक कठिनाइयाँ थीं। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद जर्मनी में अराजकता व असन्तोष व्याप्त था। सरकार को वार्साय की सन्धि की कठोर व अपमानजनक शर्तों पर हस्ताक्षर करने पड़े थे और जर्मन जनता का पूर्ण समर्थन गणतन्त्रात्मक सरकार को प्राप्त नहीं था। राज्य में अनेक ऐसे राजनीतिक दल थे जो प्रारम्भ से ही सरकार की नीतियों की अवहेलना कर रहे थे और जनता को सरकार के विरुद्ध विरोध करने के लिए भड़का रहे थे। इन दलों में सर्वाधिक उल्लेखनीय दल 'राष्ट्रीय समाजवादी और जर्मन मजदूर दल था जिसका नेतृत्व एडोल्फ हिटलर के हाथ में था। वह एक अत्यन्त महत्वाकांक्षी व्यक्ति था जो सन् 1933 में सत्ता ग्रहण करने तथा जनतन्त्रात्मक व्यवस्था को उखाड़ फेंकने में सफल रहा।

एडोल्फ हिटलर का परिचय

जैसा कि सर्वविदित है, जनतन्त्रात्मक सरकार को जर्मनी में अत्यन्त विरोधी और शत्रुतापूर्ण वातावरण का सामना करना पड़ा। जर्मनी के उप–राजनीतिक दलों ने प्रारम्भ से सरकार के मार्ग में काँटे बोने प्रारम्भ कर दिये। इन दलों का प्रमुख नेता एडोल्फ हिटलर था। उसका जन्म 20 अप्रैल, 1889 में आस्ट्रिया के एक गाँव के सामान्य परिवार में हुआ था। उसके पिता चुंगी–विभाग में एक साधारण कर्मचारी थे। निर्धनता के कारण हिटलर विधिवत् रूप में उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका। उसके पिता की यह आकांक्षा थी कि उसका पुत्र किसी सरकारी सेवा में स्थान ग्रहण करे किन्तु हिटलर को प्रारम्भ से ही कला से विशेष लगाव था। इसलिए 18 वर्ष की आयु में ही वह चित्रकला और स्थापत्य कला का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वियेना चला गया था। यहीं पर उसने यहूदियों से घृणा करना सीखा। उसने यहूदियों के साहित्य और उनके नित्यप्रति के जीवन का अध्ययन किया तथा इस बात से सहमत हो गया कि यहूदी व्यक्तिवाद, राष्ट्रवाद और जातिवाद के घातक शत्रु थे। उसकी मान्यता थी कि यहूदी साम्यवाद के साथ षड्यन्त्र करके मानवता को समाप्त करना करना चाहते थे। हिटलर गणतन्त्र का घोर शत्रु था और जर्मन जाति की सर्वोच्चता में उसे पूर्ण विश्वास था। वियेना के मजदूर उससे घृणा करते थे। 1912 ई. में वह म्यूनिख चला गया और वहाँ घरों को रंगने का कार्य करने लगा। जब प्रथम विश्वयुद्ध का विस्फोट हुआ तब हिटलर बवेरिया को सेना में भर्ती हो गया और उसने मध्य–शक्तियों की ओर से युद्ध में सक्रिय भाग लिया। जर्मन सरकार ने उसकी बहादुरी के लिए उसे लौह–क्रास से सम्मानित किया जो उसने युद्ध–क्षेत्र में प्रदर्शित की थी। उसकी योजना वहत्तर जर्मनी के निर्माण की थी किन्तु प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की पराजय

से उसे घोर निराशा हुई थी। उसकी धारणा थी कि युद्ध में जर्मनी की पराजय का कारण उसकी सैनिक शक्ति की कमजोरी नहीं है अपितु वह उसके नेताओं के विश्वासघात का प्रतिफल है।

गणतन्त्र के विरोध में असफल विद्रोह

1923 ई. में हिटलर ने गणतन्त्रात्मक सरकार के विरोध में एक विद्रोह की योजना बनायी। 8 नवम्बर को उसने ल्यूडेनडोर्फ के साथ मिलकर विद्रोह कर दिया किन्तु सरकार ने क्रूरतापूर्वक इस विद्रोह का दमन कर दिया। हिटलर को बन्दी बनाकर पाँच वर्ष के लिए जेल भेज दिया गया, किन्तु आठ माह के बाद ही उसे बन्दीगृह से मुक्त कर दिया गया। उसने अपने बन्दी जीवन का समुचित सदुपयोग किया और 'मीन कैम्फ' (Mein Kamph) अथवा 'मेरा युद्ध' (My Battle) नामक एक पुस्तक लिखो। यह वास्तव में, हिटलर की आत्मकथा थी। इस पुस्तक में उसने जर्मनी से सम्बन्धित अपने भावी कार्यक्रम का विस्तृत वर्णन किया है। यह पुस्तक 1925 ई. में प्रकाशित हुई और जर्मनी के लोगों पर इसका अत्यधिक प्रभाव पड़ा। हिटलर के समर्थक इस पुस्तक को 'बाइबिल' कहा करते थे।

हिटलर का कार्यक्रम

हिटलर ने अपने कार्यक्रम को निम्नलिखित तीन शब्दों में व्यक्त किया था:

1. यहूदियों का विरोध

2. बोल्शेविज्म का विरोध

3. पूँजीवाद का विरोध

हिटलर एवं उसके दल के कार्यक्रम के निम्नलिखित मुख्य तत्व थे :

नाजी दल का गठन

अपने कार्यक्रम को लागू करने के लिए हिटलर ने अपने दल का गठन किया। वह एक राष्ट्रीय समाजवादी था। 'नेशनल सोशलिस्ट' दल का लघु रूप जर्मन भाषा में नाजी होता है, इसलिए हिटलर के इस दल को इतिहास में नाजी दल कहा जाता था। नाजी दल की योजना को हिटलर ने तैयार किया था और उसने उसका सन्देश जर्मन जनता को दिया था। प्रारम्भ में ही जर्मनी में यहूदियों का विरोध करने की परम्परा थी। हिटलर ने इस विचारधारा को नाजी दल के प्रचार का एक साधन बना लिया था। उसने 'स्वास्तिक' को अपनी पार्टी का चिह्न बनाया। धीरे–धीरे यह प्रतीक चिह्न जर्मनी में अत्यन्त लोकप्रिय हो गया और बाजारों एवं सार्वजनिक स्थानों पर दिखायी देने लगा।

1924 ई. के अन्त में हिटलर को बन्दीगृह से मुक्त कर दिया गया। इसके बाद उसने 1925–1929 ई. तक अपना सारा समय दल के प्रचार और संगठन में देना प्रारम्भ कर दिया। वह विदेशों के साथ जर्मनी के मधुर सम्बन्ध बनाने में भी सफल रहा। उसने विदेशों से ऋण आदि सुविधाएँ भी प्राप्त कीं। इससे उसके दल को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई। 1929 ई. की जर्मनी में आर्थिक मन्दी के समय उसे अपने दल के विकास के लिए स्वर्णिम अवसर प्राप्त हुआ। उसके दल की सदस्य संख्या में भी तीव्रगति से वृद्धि हुई। 1932 ई. में नाजी दल की सदस्य संख्या 70 लाख थी। देश के विभिन्न भागों में उसके दल की शाखाएँ थीं। उसका कार्यक्रम अत्यन्त आकर्षक था और जनता उससे अत्यधिक प्रभावित थी। नवयुवकों का समर्थन प्राप्त करने के लिए हिटलर ने 'हिटलर यूथ सोसाइटी' की स्थापना की और इस प्रकार निम्न–मध्यम वर्ग का भी उसे पूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ। इस प्रकार हिटलर ने अत्यन्त सफलतापूर्वक नाजी दल का गठन किया।

हिटलर तथा नाजी दल के उदय के कारणः

हिटलर का उत्थान इतना तीव्र कैसे हुआ कि अल्प समय में ही वह जर्मनी के विशाल साम्राज्य का भाग्य–निर्माता बन बैठा, यह प्रश्न अत्यन्त विचारणीय व रुचिकर है जिसका सीधा सम्बन्ध उन कारणों से है, जिन्होंने हिटलर एवं उसकी नाजी पार्टी के उत्थान में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस प्रश्न का उत्तर देते हुए हेजन ने लिखा है–"इसका मुख्य कारण यह या कि जर्मनी में प्रजातन्त्र की जड़ें अधिक गहरी नहीं थीं। जर्मन लोगों को प्रशासन में कभी सहयोग का अनुभव प्राप्त नहीं था "मित्रराष्ट्रों ने इसमें कोई सहायता नहीं की "जर्मनी में प्रजातन्त्र में प्रजातन्त्र का जन्म राष्ट्रीय पराजय और पतन के काल में हुआ था को उत्पत्ति आर्थिक संकट के दौरान हुई थी जिससे वह कभी मुक्त नहीं हो सका।

हिटलर तथा उसके द्वारा गठित नाजी पार्टी के उदय में निम्नलिखित कारणों ने योगदान प्रदान किया था।

वार्साय की सन्धि — वार्साय की सन्धि जर्मनी के अत्यन्त कठोर व अपमानजनक थीं। जर्मनी के देशभक्त इस पर हस्ताक्षर नहीं करना थे, परन्तु मित्रराष्ट्रों के अनावश्यक दबाव के कारण उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य होना पड़ा था। इसलिए जर्मन इस सन्धि से असन्तुष्ट थे। हिटलर वार्साय की सन्धि का कट्टर विशेष था। वह कहा करता था कि इस अपमानजनक सन्धि पर हस्ताक्षर करके जनतन्त्रात्मक सरकार ने बहुत बड़ी गलती की है। उसने जर्मनी के लोगों को गणतन्त्रवादियों द्वारा की गयी गलती को सुधारने का आश्वासन दिया। उसने सन्धि की उस धारा का भी घोर विरोध किया जिससे अन्तर्गत जर्मनी को युद्ध के लिए उत्तरदायी ठहराया गया था तथा उस पर क्षतिपूर्ति के लिए एक भारी धनराशि लाद दी गयी थी। उसकी मान्यता थी कि सन्धि की यह शर्त जर्मनी की राष्ट्रीय शान और सम्मान पर एक

हमला था। चूंकि गणतन्त्रवादियों ने युद्ध के दायित्व में स्वीकार कर लिया था और वे क्षतिपूर्ति करने को भी तैयार हो गये थे, इसलिए वह उनके इर कार्य को राजनीतिक विश्वासघात मानता था। परन्तु कुछ इतिहासकारों की यह मान्यता है कि वार्साय की सन्धि हिटलर व उसके दल के उदय का मूल कारण नहीं थी। उनकी मान्यता है कि हिटलर के उदय के समय तक वार्साय की सन्धि की शर्तों में अनेक संशोधन हो चुके है किन्तु उनके तर्कों का कोई ठोस आधार नहीं है। यह वास्तविकता है कि जर्मनी के लोग इस राष्ट्रीय अपमान को कभी नहीं भूले और सदैव इसका बदला लेने के लिए तत्पर बने रहे। जब हिटलर ने इस सन्धि के प्रतिरोध के प्रश्न को उठाया तब जनता ने उसे अपना पूर्ण सहयोग व समर्थन प्रदान किया। इससे हिटलर को शक्ति में वृद्धि हुई तथा उसके दल की उन्नति का मार्ग प्रशस्त हुआ।

आर्थिक संकट – सन् 1929–1933 के बीच जर्मनी का आर्थिक संकट भी हिटलर तथा उसकी नाजी पार्टी के उदय का एक महत्वपूर्ण कारण था। इसके कारण जर्मनी की अर्थ व्यवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी। देश के प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को इस संकट का सामना करना पड़ा जिससे किसानों व गाँवों में रहने वाले अन्य लोगों के सम्मुख अनेक समस्याएँ उठ खड़ी हुई। हिटलर ने किसानों को ऋणों से मुक्ति दिलाने का आश्वासन दिया। साथ ही उसने छोटे दुकानदारों को यह विश्वास दिलाया कि बड़े कारखानों का राष्ट्रीयकरण किया जायेगा। इस प्रकार उसने श्रमिकों किसानों व छोटे दुकानदारों व निम्न मध्यम श्रेणी के लोगों का समर्थन प्राप्त किया। पूँजीपति साम्यवाद से भयभीत हो गये थे, इसलिए उन्होंने भी हिटलर को अपना समर्थन प्रदान किया। उसने बेरोजगारों के लिए रोजगार की व्यवस्था का आश्वासन दिया। उसने आर्थिक मन्दी पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिए। अनेक सफल प्रयास किये। उसके इन प्रयासों के कारण मार्क के गिरते हुए मूल्य पर अंकुश लगा और वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य पर प्रभावशाली नियन्त्रण लगाया जा सका। नाजी दल के सदस्य निरन्तर जनसाधारण में यह प्रचार कर रहे थे कि केवल उनका दल हो जनसाधारण को आर्थिक समस्याओं को हल कर सकता है। परिणामतः जनता के प्रत्येक वर्ग ने नाजी दल को अपना सहयोग व समर्थन प्रदान किया और इसके उत्थान का मार्ग प्रशस्त किया।

साम्यवाद का उदय – साम्यवाद के उदय ने नाजी दल के प्रभाव और शक्ति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। यद्यपि यह एक प्रभावोत्पादक पहलू नहीं था लेकिन फिर भी नाजी दल ने अपने स्वार्थ के कारण इसका प्रचार किया। वे साम्यवादी दल की बढ़ती हुई शक्ति से भयभीत थे।

1918 ई. में कैसर विलियम द्वितीय के पदत्याग के बाद साम्यवादियों ने शक्ति ग्रहण का प्रयास किया, परन्तु उस समय उन्हें अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिली। अपनी असफलता के बाद भी बिना निराश हुए वे निरन्तर जनता पर अपना प्रभाव

स्थापित करने के प्रयास करते रहे। सन् 1930 के चुनावों में साम्यवादियों को पालियागेण्ट में 77 सीटें प्राप्त हुई, जबकि सन् 1932 के द्वितीय चुनाव में वे 100 सीटों को प्राप्त करने में सफल रहे। साम्यवादियों के बढ़ते हुए प्रभाव को कम करने के लिए नाजी दल के नेताओं ने नियोजित तरीके से उनके विरुद्ध प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने जनता को बताया कि साम्यवादियों का उद्देश्य देश की प्रशासनिक व्यवस्था पर नियन्त्रण स्थापित करना था और फिर उसे रूस को सौंप देना था। उन्होंने यह भी प्रचार किया कि साम्यवादी दल के नेता रूसी सरकार के निर्देश पर कार्य कर रहे थे। चूंकि साम्यवादी पूँजीवाद के घोर विरोधी थे, इसलिए जर्मनी के पूँजीपति उनसे घृणा करते थे और नाजी दल का समर्थन करते थे। पूँजीपति वर्ग ने नाजी दल को आर्थिक सहायता देकर उसकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया।

वीमर गणतन्त्र के प्रति जन असन्तोष —कैसर विलियम द्वितीय के पदत्याग के बाद जर्मनी में गणतन्त्र की स्थापना की घोषणा की गयी। जर्मनी में गणतन्त्र की स्थापना का कारण यह नहीं था कि लोगों वो गणतन्त्रात्मक व्यवस्था में अत्यधिक विश्वास था, अपितु उसे केवल सुविधा की दृष्टि से सामान्य परिवर्तन के रूप में अपनाया गया था। जर्मनी की समस्त जनता ने गणतन्त्रात्मक व्यवस्था को समर्थन प्रदान नहीं किया था। जब राष्ट्रीय सभा और संसद के लिए चुनाव किये गये, तब अनेक राजनीतिक दलों का वीमर गणतन्त्र के विरोध में उदय हुआ। 1930 ई. के चुनाव में लगभग 24 दलों ने भाग लिया। राजनीतिक दलों की अधिकता के कारण गणतन्त्रात्मक सरकार ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर सकी। संसद में अनुशासन नाम की चीज नहीं रह गयी थी और व्यर्थ के वाद–विवाद में सरकार का पर्याप्त समय नष्ट हो जाता था। संसद में व्याप्त अनुशासनहीनता और भ्रष्टाचार को देखते हुए जनता को बिस्मार्क के प्रभुत्व काल का स्मरण हो जाता था धीरे–धीरे बिस्मार्क के समान सशक्त और कुशल प्रशासक की आवश्यकता अनुभव करने लगे, जो इस प्रकार की अव्यवस्था पर नियन्त्रण स्थापित कर सके। हिटलर जर्मनी की इन आशाओं को मूर्त रूप प्रदान कर सकता था। जर्मन जनता के असन्तोष और निराशा का दूसरा कारण यह था कि वीमर गणतन्त्र के नेताओं ने वार्साय की अपमानजनक सन्धि पर हस्ताक्षर किये थे और सरकार जनता की आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं कर पा रही थी, जबकि हिटलर बार–बार उन्हें आश्वासन प्रदान कर रहा था कि वह प्रत्येक मांग को पूर्ण करेगा इसलिए अधिकांश जनता ने उसका सहयोग व समर्थन करना प्रारंभ कर दिया था।

हिटलर की यहूदी–विरोधी नीति –जर्मनी में यहूदी अल्प–संख्या में निवास करते थे किन्तु वे अत्यन्त धनवान और खुशहाल थे। वे अतयंत शिक्षित थे। उनका प्रेस और कारखानों पर पूर्ण नियन्त्रण था। उनमें से अधिकांश उच्च पदो पर नियुक्त थे। यहूदियों की सम्पन्न आर्थिक दशा के कारण जर्मन उनसे घृणा करते थ। प्रारम्भिक

समय से हो जर्मनी में यहूदियों के विरोध की एक परम्परा थी। अधिकार जर्मनी के प्रत्येक राजनीतिक एवं राष्ट्रीय संकट के लिए यहूदियों को उत्तरदायी समझते। हिटलर ने भी अपने प्रारम्भिक जीवन में ही यहूदियों से घृणा करने का सबक सीख यहूदियों के जीवन से सम्बन्धित इतिहास को पढ़ने के बाद हिटलर इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि वे व्यक्तिवाद, राष्ट्रवाद और जातिवाद के भयंकर शत्रु थे और मानवता को समाप्त करने के लिए उन्होंने मार्क्सवादियों के साथ मिलकर षड्यन्त्र रचा था।

हिटलर ने जर्मन जनता की यहूदी–विरोधी भावनाओं का पूरा लाभ उठाया। उसने यह प्रचार किया कि यहूदी जर्मन राष्ट्र के शत्रु थे और उनके कारण ही प्रथम महायुद्ध में जर्मनी को पराजय हुई थी। उसने जर्मन जनता को यह आश्वासन प्रदान किया कि सत्ताग्रहण करने के बाद वह यहूदियों को देश से निष्कासित कर देगा। हिटलर की यहूदी–विरोधी नीति के कारण उसे जन सहयोग प्राप्त हुआ वह उसके तथा नाजी दल के उदय में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुआ।

हिटलर का व्यक्तित्व –हिटलर का व्यक्तित्व अत्यत आकर्षक था। वह एक प्रभावोत्पादक व कुशल वक्ता था। उसे प्रचार में अत्यधिक विश्वन था। वह बार–बार अपने विचारों और सिद्धान्तों को जनता के सम्मुख दोहराया करता था। उसने देश के प्रचार और विज्ञापन के साधनों पर अपना पूर्ण नियन्त्रण स्थापित कर लिया था और इन्हीं के माध्यम से वह नाजी दल के सिद्धान्तों का जनता में निरन्तर प्रचार किया करता था। उसका प्रचार–मन्त्री गोबिल्स (Gobilse) एक सुयोग्य वक्ता था। उसने हिटलर क पर्याप्त सहायता की । इस प्रकार हिटलर के आकर्षक व्यक्तित्व और कुशल वक्ता के गुणों रे नाजी पार्टी के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत की।

प्रकृति व स्वभाव से जर्मन लोगों का दृष्टिकोण सैनिक था। वे सदैव सैनिकवाद में विश्वास करते थे। जर्मनी का इतिहास साक्षी है कि वहाँ केवल उन्हीं शासकों को सफलता प्राप्त हुई जिन्होंने सैनिकवाद की नीति का अवलम्बन किया। फ्रेडरिक, विस्मार्क और कैंसर विलियम द्वितीय इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। जर्मनी की जनता ने इनको अपना पूर्ण सहयोग और समर्थन प्रदान किया था क्योंकि ये सैनिक कार्रवाइयों में विश्वास करते थे। अपनी सैनिक नीति के कारण ही जर्मनी महान् उन्नति कर सका। जर्मन लोग इस प्रकार की स्थापना के इच्छुक थे जिसके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जर्मनी की शक्ति व सम्मान को पुनः स्थापित किया जा सकता। वीमर गणतन्त्र जनसाधारण की इच्छाओं के अनुकूल सिद्ध नहीं हुआ, इसलिए उन्होंने जनतन्त्रात्मक सरकार से घृणा करना आरम्भ कर दिया। इसी समय हिटलर ने अपने सैनिकवादी विचारों का प्रचार किया, अतः जनता ने उसकी नीतियों का समर्थन करके उसके उत्थान के मार्ग को उन्मुख किया।

विरोधी दलों की दुर्बलताएं – नाजी पार्टी के विरोधी दल अनेक हिस्सों में विभाजित थे। उनमें आपसी एकता का अभाव था। वास्तव में उनके पास कोई राष्ट्रीय कार्यक्रम नहीं था। वे अपने–अपने स्वार्थों की पूर्ति में संलग्न थे।

जिस समय हिटलर एवं उसका दल शक्ति संचय के लिए निरन्तर प्रयास कर रहा था, तब विरोधी दलों ने संयुक्त होकर उसका कोई विरोध नहीं किया। विरोधी दलों में समाजवादी प्रजातान्त्रिक दल (Social Democratic Party) सर्वाधिक शक्तिशाली और प्रभावोत्पादक दल था, किन्तु यह भी तटस्थ बना रहा और इसने नाजी दल के विकास पर अंकुश लगाने का कोई प्रयास नहीं किया। साम्यवादियों को यह विश्वास था कि नाजी दल कभी भी देश की आर्थिक दशा में सुधार नहीं कर पायेगा और इसलिए उसका शीघ्र पतन हो जायेगा। सोशल डेमोक्रेट्स और साम्यवादियों की इस उदासीनता को देखते हुए अन्य दलों ने भी तटस्थता की जीति को अवलम्बन किया। नाजी दल ने अन्य दलों के आपसी मतान्तरों एवं कमजोरियों का लाभ उठाया और उन्हें एक–एक करके नष्ट करके देश की समस्त शक्ति अपने हाथ में केन्द्रित कर ली।

हिटलर द्वारा जर्मन परम्पराओं का समर्थन–हिटलर का कार्यक्रम, आदर्श एवं कार्यप्रणाली सभी जर्मन परम्पराओं पर आधारित था। जर्मनी के निवासी वार्साय की सन्धि के विरोधी थे। हिटलर उनकी भावनाओं से अवगत था, अतः उनकी सहानुभूति अर्जित करने के लिए उसने भी वार्साय की सन्धि के विरुद्ध प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। जर्मन लोग वीमर गणतन्त्र से घृणा करते थे और राजतन्त्र के समर्थक थे। यद्यपि जर्मनी में विलियम कैसर के पदत्याग के बाद गणतन्त्र स्थापित हो गया था, किन्तु देश की जनता को गणतन्त्र से कोई लगाव नहीं था अपितु केवल सुविधा की दृष्टि मे इस व्यवस्था को अपना लिया गया था। जर्मनी की सैनिक शक्ति कुचल दी गयी थी और आत्मसमर्पण के अतिरिक्त उनके पास कोई विकल्प नहीं रह गया था। वे समझते थे कि जर्मनी की गणतन्त्रात्मक सरकार मित्रराष्ट्रों और विशेष रूप से अमेरिका का अच्छा और अधिक व्यवस्थित सहयोग प्राप्त कर सकेगी। हिटलर ने भी अपने देश के लोगों की इन भावनाओं को मान्यता प्रदान की और उन्हें सम्मान देते हुए देश के प्रजातन्त्रात्मक स्वरूप की आलोचना करनी प्रारम्भ कर दी। इस प्रकार हिटलर द्वारा अपनायी गयी सैनिकवाद की पद्धति पूरी तरह से जर्मन परम्पराओं के अनुकूल थी जिसके कारण उसे तथा नाजी दल को शीघ्र उत्थान में अत्यन्त सहयोग प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि वार्साय की सन्धि की कठोर एवं अपमानजनक शर्तों और जर्मन लोगों की उसके प्रति अत्यधिक घृणा, आर्थिक संकट, साम्यवाद का उदय, वीमर गणतन्त्र के प्रति जनता का असन्तोष, यहूदियों के प्रति

जर्मनवासियों को सामान्य घृणा की प्रवृत्ति और हिटलर की यहूदी–विरोधी नीति, उसका आकर्षक व्यक्तित्व, कुशल वक्ता के गुण तथा जर्मन जनता की भावनाओं और परम्पराओं के प्रति उसके लगाव आदि के कारणों ने हिटलर व नाजी दल के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। एक साधारण पेण्टर और सैनिक को स्थिति से ऊपर उठकर जर्मनी के चान्सलर और फिर शासक के पद को प्राप्त करना हिटलर जैसे किसी असाधारण प्रतिभा के व्यक्ति के लिए ही सम्भव हो सकता था।